

मनोरोगों में श्रीमद्भगवद्गीता एवं कठोपनिषद् की भूमिका

नीलम त्रिपाठी

शोध छात्रा, डिपार्टमेंट ऑफ योग, फैकल्टी ऑफ सोशल साइंस एण्ड ह्यूमैनिटीज, एकेएस विश्वविद्यालय, सतना

डॉ. धीरेन्द्र सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ योग, फैकल्टी ऑफ सोशल साइंस एण्ड ह्यूमैनिटीज, एकेएस विश्वविद्यालय, सतना

शोध सारांश :-

योग शास्त्र भी मन को अन्तःकरण का एक भाग मानता है। मन और शरीर के तुलना में मन का मूल्य हजारों गुना अधिक है। क्योंकि 'सुखाधुपब्धिसाधनमिन्द्रियं मनः' अर्थात् मन ऐसी इन्द्रिय है जो अन्य इन्द्रियों के अनुकूल एवं प्रतिकूल संवेदनों को ग्रहण कर क्रमशः सुख तथा दुःख की अनुभूति करवाता है। अतः कहा जा सकता है कि मन के नियमन पर ही संवेदनाग्राह्य सुख दुःख का भाग निर्भर है। मन में विकृत विचार, व्यवहार, चिन्तन, असफलता, निरसता आदि के कारण ही मनोविकार आते हैं, जो मनोरोग का कारण बनते हैं। मानसिक चिकित्सा की प्रचलित विधियाँ, मनोविज्ञान के तौर-तरीके मिल-जुलकर भी इस चुनौती का सामना करने में प्रायः असमर्थ रहें हैं। ऐसे में चिन्तित विशेषज्ञों की दृष्टि विश्व भर के पुरातन ज्ञान भण्डार एवं प्राचीन ऋषियों द्वारा अन्वेषित योग दर्शन विज्ञान पर जा टिकी है।

कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों एवं आध्यात्मिक जीवन जीने की कला का एक व्यावहारिक ग्रंथ है, वर्तमान परिस्थितियों में उत्पन्न विकृतियों के समाधान में कठोपनिषद् एवं श्रीमद्भगवद्गीता का ज्ञान उनका उचित मार्गदर्शन कर सकता है। इन ग्रंथों में वर्णित श्रेष्ठ आत्म ज्ञान, निष्काम कर्म, योग साधना व भक्ति मनुष्य को वर्तमान परिस्थितियों में आत्मविश्वास बढ़ाने एवं शांतिपूर्ण जीवन जीने की शिक्षा देते हैं।

मुख्य बिन्दू : श्रीमद्भगवद्गीता, कठोपनिषद्, योग, मनोरोग।